Review Of Research
Vol. 3 | Issue. 6 | March. 2014
ISSN:-2249-894X
Available online at www.ror.isrj.net

जनवादी विचार

Anjali kaistha

Asst.Prof. Dayal Singh college(EVE)

सारांश -''जनवाद'' शब्द अंग्रेजी के ''डेमोक्रेसी'' शब्द का हिंदी प्रतिरूप है। हिंदी में 'डेमोक्रेसी' शब्द के लिये 'जनवाद' के अतिरिक्त प्रजातन्त्र, जनतन्त्र, लोकतन्त्र, जम्हूरियत, लोकशाही आदि शब्दों का प्रयोग होता है। 'डेमोक्रेसी' शब्द ग्रीक भाषा के 'देमोस' का शाब्दिक अर्थ है- 'जनता' और 'क्रेटिन' धातु का शाब्दिक अर्थ है-''शासन करना'' अतः 'डेमोक्रेसी' का शाब्दिक अर्थ हुआ- 'जनता का शासन' 'जन' शब्द समाज के बहुत से वर्गों के लिए प्रयोग होता हैजैसे जो आज की समाज-व्यवस्था में शोषित है, उत्पीड़ित है। इस शोषित वर्ग को उसके अधिकारों के प्रति सजग करने वाले विचार ही जनवाद है।

प्रस्तावना-

आचार्य नरेन्द्र देव का यह मानना है कि 'समाज में दो प्रमुख वर्ग (शोषक और शोषित) है। उद्यौगिक क्रान्ति के कारण समाज में एक जबरदस्त क्रान्ति हुई और समाज का सामन्ती ढांचा लड़खड़ाकर गिर गया और उसके स्थान पर उत्पादन के साधनों पर पूंजीपतियों का कब्ज़ा हो गया जिससे समाज का बहुसंख्यक वर्गमजदूरबनकर रह गया|मजदूर वर्ग उत्पादन के साधनों से वंचित होने के कारण उन चन्द पूंजीपतियो के हाथ अपनी श्रम-शक्ति बेचने को विवश हो जाता है जिनके आधिपत्य में उत्पादन और वितरण के साधन सिमट जाते है अर्थात मिलों-कारखानो से लेकर मंडियां तक उन्ही के कब्जे में रहती हैं। इस प्रकार पूंजीपति और मजदूर ये आजकल के दो आधारभूत वर्ग है, जिनके मध्य वर्ग-संघर्ष जारी है।''वर्ग-संघर्ष की जरुरत को नरेन्द्र देव वर्गविहीन समाज की स्थापना में उचित मानते है। इनके अनुसार, ''हमारा वर्ग-विहीन

समाज स्थापित करने का लक्ष्य वर्ग-संघर्ष के साधन को अपनाने से ही सिद्ध हो सकता है। आज समाज में शोषक और शोषित वर्गों के बीच जो संघर्ष चल रहा है, उसमें हमारा फर्ज शोषित जनता में ऎसी चेतना पैदा करना है कि शोषित वर्गों की लड़ाई आर्थिक न रहकर राजनितिक बनजाये|हमें शोषित वर्गों के मन में यह बात बैठा देनी है कि जब तक समाज की प्रचलित व्यवस्था कायम है और उत्पादन के साधनों पर पूंजीपतियों का कब्ज़ा है। तब तक उसकी हालत नहीं सुधर सकती ।''अतः कहा जा सकता है कि वर्ग-चेतना सम्बन्धी अवधारणा पूर्णतः सर्वहारा के दृष्टिकोण से की गयी है। आगे नरेन्द्र देव ने लिखा है, ''शोषक वर्गों यानि जमीदार और पूंजीपति तथा शोषित जनों यानि किसान, मजदूर और दूसरे सताये हुये तबकों के बीच संघर्ष तो आज भी जारी है, परन्तु आज उनकी यह लड़ाई आर्थिक लड़ाई नहीं है।''इसका कारण हैं कि आज कारखानों में मजदूर बड़ी संख्या में इकट्ठे होकर मालिकों से लड़ाई करते हैं और इस लड़ाई में शहीद भी बहुत होते है। उनकी यह लड़ाई मजदूरी बढ़ाने, काम के घण्टे घटाने आदि के लिये नहीं होती वरन वर्त्तमान व्यवस्था के अन्दर केवल अधिक से अधिक सुविधायें प्राप्त करने के लिये होती हैं|''हमें मजदूरों को समझाना है कि समाज के मौजूदा आर्थिक ढांचे को कायम रखते हुये केवल छोटे-छोटे अधिकारों के लिये लड़ने से ही काम नहीं चलेगा बल्कि सारी मजदूर जमात को संगठित होकर एक ऎसी निर्णायक लड़ाई लड़नी पड़ेगी जिसमें मौजूदा आर्थिक व्यवस्था का ही अन्त हो जाये और एक ऎसी आर्थिक प्रणाली की स्थापना की जाये जिसमें आज की तरह उत्पादन के साधनों पर किसी एक वर्ग विशेष का अधिकार न हो बल्कि समूचे समाज का अधिकार हो।''अतः जनवाद के बारे में कहा जा सकता है कि 'जनवाद' आज की भयावह जिंदगी और खुरदरे यर्थार्थ का चित्रण है, समस्याओं के जाल में चतुद्रिक घिरे मेहनतकश आवाम के शोषण और उसकी बदहाली का चित्रण है, तथा तमाम तरह के दहकते सवालों से सीधा साक्षात्कार है'' अतः स्पष्ट है जनवाद एक ऐसी देहकती मशाल है जिसे शोषित उत्पीड़ित जनता ने अपने मजबूत हाथों में उठाया है।

सन् **1947**को जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो भारतवासियों में अचानक बहुत सारी नयी इच्छायें जाग उठी| परन्तु इन इच्छाओं के टूटते देरी नहीं लगी| स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जब सत्ता पूंजीपति वर्ग के हाथों में आ गई तो आम जनता को शोषण किया जाने लगा| अतः यह सही है कि स्वतन्त्रता धारा को बहुत बड़े अवरोध से गुजरना पड़ा, इसके आन्तरिक और बाहय दोनों कारण थे।वास्तव में जनवाद का बहुत बड़ा दायरा है। डा इन्द्रबहदूर सिंह के अनुसार, ''जनवादी-मार्क्सवादी, साहित्य-संास्कृतिक दर्शन ने ही नहीं बल्कि साहित्यिक-संास्कृतिक सृजन और क्रियाशीलता ने समाज के सचेत हिस्से के मध्य एक हद तक अपनी श्रेष्ठता कायम कर ली है और इस प्रकार आज हम एक ऎसे दौर में है, जो समाज के सचेत हिस्सों में जनवादी मूल्यों

की विजय का दौर है, और जनवादी चेतना के प्रसार की अन्नत सम्भावनाये, हमारे सामने खुल रही है, दूसरी और यह दौर हमारी वर्त्तमान व्यवस्था के गहराते संकट का दौर है जो इस दौर में अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही है और फौरी तौर पर इस संकट से उबरने के लिये जनवादी शक्तियों पर कभी भी जघन्य हमला कर सकती है। आज जहाँ जनवादी शक्तियों और चेतना के विस्तार और प्रसार की आवश्यकता पहले से कही कई गुना अधिक है। इसलिये आज यह जरुरी हो जाता है कि हम अपनी शक्तियों और कमजोरियों को सही तरीके से आकें और अपनी कमजोरियों के खिलाफ जो कि हमारे प्रान्तों में शत्रु के एजेन्ट का काम करती है, निर्भय हो कर संघर्ष चलायें|" जनवादी चेतना के विस्तार और प्रसार के लिये भारत में सामाजिक, राजनितिक चेतना सम्पन्न बुद्धिजीवियों तथा रचनाकारों ने जनवादी लेखक संघ नाम से समय-समय पर पाँच राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किये है। "जिनमें पहला राष्ट्रीय सम्मेलन भारत की राजधानी दिल्ली में 13-14फरवरी सन् 1982को आयोजित किया गया|इसे दूसरे शब्दो में भारत में जनवादी लेखक संघ की स्थापना का प्रथम सम्मेलन भी कह सकते है। जनवादी लेखक संघ का दूसरा राष्ट्रीय सम्मेलन 20-21अक्टूबर सन् 1984 को वाराणसी में सम्पन्न हुआ| तीसरा राष्ट्रीय सम्मेलन लेखकों ने 18-20 सितम्बर सन् 1987 को भोपाल में आयोजित किया| जनवादी लेखक संघ का चौथा राष्ट्रीय सम्मेलन 10 अक्टूबर 1992 को जयपुर में सम्पन्न हुआ| अभी हाल ही में 1-3 फरवरी सन् 1997 को कलकत्ता में जनवादी लेखक का पाँचवा राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया है।"

रमेश उपाध्याय ने आठवें दशक में आकर जनवाद के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट क्षमता और नये तेवरों का साक्ष्य दिया| जनवादी विचारधारा होने से रमेश उपाध्याय की अनिवार्य संवेदना देश की विशाल जनता की स्थितियों-परिस्थितियों में रची बसी है और एक सजग लेखक संवेदना के मूल आधार को कभी नहीं छोड़ सकता| इसी कारण रमेश उपाध्याय ने कहा भी है, "मैं अपनी कहानी के माध्यम से अपने पाठक के साथ (और आलोचक के साथ भी, क्योंकि वह भी एक प्रबुद्ध पाठक ही होता है) जो रिश्ता बनाना चाहता हुँ, वह समान जरूरतों पर आधारित बराबरी का, जनवादी रिश्ता है।" यह वास्विकता है। इन्होंने अपने कथा-साहित्य में पात्रों के मध्य इस रिश्ते को कायम रखा है।

समाज की जड़ निम्नवर्ग है और उसी को अप्रत्याशित काष्ठ है। रमेश उपाध्याय के कथा-साहित्य में निम्न वर्ग और उस निम्न मध्य वर्ग की स्थितियों का चित्रण है जिस पर व्यवस्था की मार सर्वाधिक पड़ती है। इस स्थिति को 'दण्डद्वीप' उपन्यास में और 'देवीसिंह' की कहानी में पात्रों के माध्यम से दिखाया गया है। 'दण्डद्वीप' उपन्यास में राजू के शब्दों में "घर आ कर खाट पर लेट जाता हूँ तो लगता है, सारे शारीर पर खूब मार पड़ी है अच्छी तरह पीटे जाने के बाद

मुझे एक कोठरी में डाल दिया गया है। मेरा इसलिये मुझे और ज्यादा सालता है कि मैं बेहोश नहीं हो पाता हूँ|नींद नहीं आ रही है। शरीरके हर जोड़ का दर्द मुझसे मेरी पूरी संवेदना चाहता है और मैं कस कर आखें मींच कर सो जाना चाहता हूं| जानता हूं कि दर्द को सहानुभूति दो तो वह तुरंत दवा मांगने लगती है।" इस उपन्यास में समाजिक विद्रूपताओं और विसंगतियो का उदघाटन हुआ है। पूंजीवादी व्यवस्था के परिणाम स्वरूप उत्पन्न पतनशील मूल्यों एवं सामाजिक विकृतियों तथा विद्रूपताओं को इस उपन्यास में राजू के माध्यम से बेनकाब करने की कोशिश की है।चारों तरफ फैली समस्याओं की मार और तबहियो के बीच में घुट-घुट कर जीते हुये आदमी या मजदूर वर्ग के जीवन की त्रासदी का सशक्त चित्रण इस उपन्यास में राजू के माध्यम से हुआ है। देश में हर तरफ भ्रष्टाचार, अकेलापन, पराजय और दिशा-हीनता है। इसलिये मजदूर घुटता है। वास्तव में "मजदूर" क्या चाहता है? मजदूर जिन्दा रहना चाहता है। जब उससे जिन्दा नहीं रहा जाता, हल्ला करता है। उसको गुस्सा आता है। गुस्से में स्ट्राइक करता है।इसलिये मजदूर को जिन्दा रहने दो, उसको गुस्सा मत आने दो। लेकिन मजदूर के मनोविज्ञान को भी समझो| मजदूर मुफ्त में कुछ नहीं लेना चाहता| मुफ्त में उसे कुछ दिया जाये तो संदेह करता है। इसलिये कुछ देर उसे बौखलाने दो। कुछ देर के लिये सख्त पड़ जाओ| उसे महसूस करने दो कि वह संघर्ष कर रहा है। मतलब क्या? उसे महसूस करने दो कि जो कुछ उसे मिला, उसकी मेहनत का मिला| संघर्ष को भी वह मेहनत मानता है। यह है मजदूर का मनोविज्ञान|" अतः मिल का मालिक भ्रष्ट आदमी है। और वह मजदूरों का शोषण कार रहा है। इस कहानी में लेखक ने उसके माध्यम से दमन और तानाशाही का चित्रण किया है। अपने मुनाफे को बढ़ाने के लिये मजदूरों के मनोविज्ञान को पढ़कर उनका शोषण करता है। उन पर अत्याचार करने के लिये उत्साहित रहता है।

रमेश उपाध्याय यह बखूब जानते है कि आज किसी को अपना अधिकार न तो हाथ पसारने पर मिला है, न मिलेगा| वह यह भी जानते है कि अधिकार भीख से नहीं मिलता, उसे छीन लेना पड़ता है। इस स्थिति को रमेश उपाध्याय ने कहानी 'दरम्याना सिंह' में पात्र अनुराग के पिता के माध्यम से दिखाया है। "इनके मुंह खून लग चूका है बेटे| ये आदमखोर हो चुके हैं। ये सामन्त और पूंजीपति नहीं मगर मन बचन कर्म से ये उनके भी बाप हैं। पुराना सामन्त जनता है कि उनके दिल लद चुके, पूंजीपति भी समझता है, कि उसकी नैया डूबनेवाली है लेकिन ये आंख के अंधे समझते है, सब शशवत हैं। सोचते है, जो लूट-खसोट ये कर रहे हैं, हमेशा यों ही चलती रहेगी|यही वजह है कि पुरानी व्यवस्थओं के तमाम गले-सड़ेपन को अपनी छाती से चिपकाये हुये हैं| ये जिस दलदल में धंसे हुये हैं, उसमें से इनका निकलना बहुत मुश्किल है। कोई ताज्जुब नहीं कि अपनी लड़ाई में तुम्हें इन लोगों से भी दो-चार होना पड़े|" वर्त्तमान समय में

पूंजीपतियों के शोषण और अत्याचार इतने बढ़ गये हैं कि सामान्य जनता को उनके साथ पूरी तरह लड़ाई लड़नी पड़ेगी| रमेश उपदयाय ने शोषण के खिलाफ, शोषित वर्ग को संगठित होकर खड़े होने के लिये अपने कहानियों के पात्रों को बार-बार प्रेरित किया है। 'दरम्याना सिंह' कहानी में लेखक ने शोषित-पीड़ित जनता को आगे बढ़ कर अपना हक़ छीनने के लिये प्रेरित किया है। आज संस्थाओं के नाम पर जनता को बेवकूफ बनाया जा रहा है परन्तु आम जनता इससे पूरी तरह परिचित है। मीनाक्षी के माध्यम से यह बात स्पष्ट की जाती है। वह कॉमरेड है और आम जनता से पूरी सहानुभूति है। अतः वह जनता को प्रेरित कर रही है।

''यहसंस्था आपकी कोई समस्या हल नहीं कर सकती
क्योकि
इसके पास आपकी समस्याओ के समाधान हैं ही नहीं
यह संस्था
न तो आपको शोषण,दमन और उत्पीड़न से
बचा सकती है न भूख,बेरोजगारी और मौत से
इसलिए
इस संस्था का बदलना जरूरी है
और इसे आप ही बदल सकते हैं|
संगठित होकर संघर्ष कीजिये |''

अतःइस कहनी के माध्यम से रमेश उपाध्यायने आम जनता को संगठित होकर शोषकों के विरुध लड़ाई लड़ने के लिये कहा है |

जनवादी साहित्य निश्चित रूप से सर्वहारा वर्ग का साहित्य है|इसमें अर्थ की निशिचतता है | ''सर्वहारा शब्द अक निश्चित अर्थ का वाहक है |जबकि प्रगतिशील साहित्य आम आदमी से प्रतिबद्धजैसेशब्दों को साथ लेकर जिसका अक निश्चित अर्थ होने के साथ ही अनिशिचतअर्थ भी चलता है |चूंकि आम आदमी में वह चालक बुर्जुआ भी आ जाता है जो अपने ऊपर आम आदमी का नकाब लगाये रहता है। उसकी इन घृणितचेष्टाओंको बेनकाब करना, सच्चे जनवादी लेखक का प्रथम कर्तव्य है। जनवादी साहित्य का कार्य सर्वहारा की दृष्टि से विश्व को देखते हुये जन से युक्त होकर उनके संघर्षो से जुड़कर उसे कलात्मक अभिव्यक्ति देना है।" यही कार्य रमेश उपाध्याय ने "नैतिक नितांत" कहानी में किया है। वर्त्तमान समय में पूंजीवादी व्यवस्था गम्भीर रूप से संकट का विषय है। पूंजीपति के शब्दों से यह बात स्पष्ठ हो जाती है "हमारी बात छोड़िये जी, हम तो

अपना मुनाफा देखते हैं, चाहे खून में से निकले चाहे पसीने में से|" अतः आज के समय में पूंजीपति वर्ग आम जनता का शोषण करने में लगा हुआ है।परन्तु सर्वहारा वर्ग भी उनकी चालों को समझ रहे हैं। उनके मन में पूंजीपतियों के खिलाफ आक्रोश है। "ऐसे कह रहे हैं जैसे हमारा बोनस काट के हमारे देहाती भाइयों में बांट ओयेंगे। यह क्यों नहीं कहते कि हमारा बोनस काट के एक और नयी मिल खड़ी करना चाहते हैं।वास्तव में आम जनता सीधी-सादी है। सब कुछ जानते हुये भी कुछ करने में असमर्थ है। भारत की जनता को सैकड़ो वर्षों तक समाजिक-सांस्कृतिक शोषण करने में जड़कर शोषक वर्ग ने उसे अंधविश्वासी बना दिया है। उसे अंधकार से निकलकर ज्ञान का प्रकाश देना और शासको के असली चेहरे दिखाना आवश्यक है। आम जनता की मजबूरी और व्यवस्था के दांवपेच का सही चित्र रमेश उपाध्याय ने ' शंखध्वनि की कथा' में पात्र के माध्यम से खींचा है। जो कि लेखक है।तथा व्यवस्था के प्रति उसमें कुढ़न और आक्रोश है। आज आम आदमी की ऐसी दशा हो गई है कि स्वतन्त्र रूप से लिख भी नहीं सकता है।कार्योंकि राजनीतिज्ञों का बोलबाला है "सड़े हुए राजनीतिक लेख लिखो,पैसा कमाओ,सत्ताधारियों की चमचागिरी करोऔर तब घर में नौकर-चाकर रखो,एनआईटी नयीचीजें खरीद कर लाओ औरशान मारो की हम भी बड़े आदमी हैं। कितनी बार समझा दिया कि भई अपनी मेहनत से कोई अमीर नहीं बंता,अमीर बनता है आदमी दूसरे आदमियों का शोषण करके।"अतः इस प्रकार की स्थिति को 'कार्यक्रम के बाद' कहानी में कलाकार के माध्यम से दिखाया गया है। जो की पूंजीपति वर्ग के खिलाफ विद्रोह करना चाहता है परंतु साथ में यह भी जानता है की यह असंभव है। "हाँ साहब,अब तो इंकलाब आ ही जाना चाहिए। मगर मुसीबत यह है की लाएगा कौन?ये मार्क्स और लेनिन का नाम लेने वाले लौंडे लपाड़े?सुना था बड़े इंकालबी प्रोग्राम करते हैं। इधर से प्रोग्राम मिलने बंद हो गये तो हमने सोचा कि चलो उधर चलते हैं। कम से कम रोटी तो देंगे वो लोग। मगर जाकर क्या देखते हैं कि वे लोग तो हमसे भी उम्मीद किए बैठे हैं कि हम उनके लिए प्रोग्राम भी करें और मेहनताना भी मांगे। बताइये।"जन साधारण के अहसासों से जुड़े होने के कारण रमेश उपाध्याय उनके मोहभंग से निराश हो चुके हैं। वास्तव में रमेश उपाध्याय अपने कथा-साहित्य में कभी किसी विशेष व्यक्ति को महत्त्व नहीं देते वरन जन-जीवन के प्रसंगों को ही महत्तव देते हैं।

यह भी सत्यहै कि इस पूंजीवादी व्यवस्था में आम-आदमी कि इच्छाओं को,आवश्यकताओं को बुरी तरह कुचला गया है। यह व्यवस्था बुर्जुवा वर्ग के हितों का पक्षधर है और जनता पर इसकी चोट भयंकर है। इस स्थिति को 'पानी की लकीर' कहानी में नारायण के माध्यम से दर्शाया गया है। जो कि कर्मचारियों पर हो रहे अत्याचारों को देख रहा है और व्यवस्था के खिलाफ कुछ भी करने के लिए छटपटा रहा है। आजकल धर्म के नाम पर संस्थायेँ बनती जरूर

हैं परंतु वहाँ भी आमकर्मचारी वर्ग पर अत्याचारहोते हैं। "अवधूतों के पास त्रिशूल हैं।पुलिस भी उन्हीं का पक्ष लेगी। कर्मचारी निहत्थे हैं। उनकी जरा-सी भी बदत्तमीजी आश्रम में बर्दाश्त नहीं की जाएगी।ऐसा सबक सिखाया जाएगा कि हमेशा याद रखें..... ये लोग फिर बदत्तमीजी करेंगें ..... फिर मार खायेंगे..... ये लोग बार-बार बदत्तमीजी क्यों करते हैं?बार-बार मार क्यों खाते हैं?"वास्तव मेंकर्मचारीवर्ग में भीउच्च वर्ग के खिलाफ आक्रोश है क्योंकि इस क्रूर व्यवस्था में उनके साथजानवरों की तरह व्यवहार किया जाता है। यह गरीब निरीह जनता को चारों ओर से जकड़कर उसका खून चूस रही है। परंतु जनता की दयनीय दशा के प्रति यह पूरी तरह से मौन हैक्योंकि पूंजीपति वर्ग जनता के कष्टों को दूर करने के लिए अपनी कोई ज़िम्मेदारी महसूस नहीं करतावह हृदयहीन हो चुका है और बेबस जनता पर नृशंस अत्याचार कर रहा है।

आज लेखक सिर्फ व्यवस्था से असंतोष ही प्रकट नहीं करता वरन वह क्रांति का आग्रही भी है। इस क्रूर,व्यवस्था के प्रति रमेश उपध्याय में जनवाद की भावना भरी हुई है। इसे लेखक ने 'कल्पवृक्ष' में वैज्ञानिक पात्र के माध्यम से दिखाया है। "आप लोग यह न समझें कि कोई ओर आकार कुछ करेगा। जहरीली गैस हमारी बस्ती में फ़ेल रही है। मरेंगे तो हम लोग मरेंगे। किसी ओर को क्या पड़ी है?इसलिये एक बात साथियो बस एक बात याद रखो कि हमारी लड़ाई कोई दूसरा लड़ कर नहीं देगा। अपनी लड़ाई हमे खुद ही लड़नी पड़ेगी। यह संकट का समय है साथियो हमें आपसी मतभेद भुलाकर एक हो जाना चाहिये। एकजुट होकर अपनी ताकत बढानी चाहिये और निर्णायक हमला बोलने की तैयारी करनी चाहिए।"अतः इससे स्पष्ट है कि जनता कभीअशांति नहीं चाहती वह अशांति करती है शांति के लिये,विद्रोह करती है अच्छी व्यवस्था बनाने के लिये। पूंजीवादी विचारधारा द्वारा समाजकी इस शक्ति को नष्ट करने की कोशिश होती रहती है। ऐसी व्यवस्था के खिलाफ जनता की आवाज़ को,विद्रोह को शक्ति देना आज हर एक बुद्धिजीवी का कर्तव्य है।

अतः रमेश उपाध्याय ने कथा-साहित्य में जनवादी विचारधारा को अपनाया है इसी विचारधारा के कारण ये अपने कथा-साहित्य में कहीं शोषकों की बात करते हैं,कहीं भारत की दुखी जनता की,कहीं अंधी सामंतवादी लिप्सा की,कहीं धार्मिक संस्थाओं में पिसते कर्मचारीवरह की और कहीं कारखाने में काम करते हुये बेबस मजदूर वर्ग की। एकऔर जहां देश में लोग भूखों मर रहे हैं,वहीं दूसरे लोग ऐशों आराम कर रहे हैं। इससे सामान्य मनुष्य के आर्थिक जीवन के आगे अनेक प्रश्नचिन्ह लगे हुये हैं। इन सारी विडंबनाओं को रमेश उपाध्याय ने जनवादी विचारों के अंतर्गत कथा-साहित्य में पूरी ईमानदारी और सजीवता से प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ:

1. नरेंद्र सिंह साठोतरी हिन्दी कविता में जनवादी चेतना,पृ० 17,46
2. नरेंद्र देव,राष्ट्रियता और समाजवाद,पृ०273-274 ,282,283
3. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी,दस्तावेज़,जनवरी-मार्च 1989,पृ०16
4. डॉ० इंद्रा बहादुर सिंह,जनवादी समीक्षा दृष्टि और जनवादी रचनाकर,पृ०5
5. स्मरणिका,पांचवा राष्ट्रियता सम्मेलन,कलकत्ता,1-3 फरवरी 1997
6. रमेश उपध्याय,किसी देश के किसी शहर में,पृ०20
7. रमेश उपध्याय,दण्डद्वीप,पृ०119
8. रमेश उपध्याय,नदी के साथ,पृ०131
9. रमेश उपध्याय,चतुर्दिक,पृ०91-92,110-111
10. रमेश उपध्याय,नैतिक नितांत,(पैदल अंधेरे में)पृ०22,24
11. रमेश उपध्याय,पैदल अंधेरे में,पृ०50,88
12. रमेश उपध्याय,बदलाव से पहले,पृ०46,137-38